International Journal of Advance and Applied Research (IJAAR)
Peer Reviewed Bi-Monthly
ISSN – 2347-7075
Impact Factor –7.328
Vol.9 Issue.3 Jan–Feb- 2022

तालस्ताय और साईकिल एवं अकाल में सारस का संवेदना और शिल्प

डॉ. श्रीमति राजेश्वरी मरकाम

सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय महाविद्यालय भुआ बिछिया जिला–मण्डला म.प्र.

तालस्लाय और साइकिल' केदारनाथ सिंह की महत्वपूर्ण कृति है, वर्ष २००५ में प्रकाशित कविता संग्रह है। पानी की प्रर्थना त्रिनीदाद, पाण्डुलिपियां, घोसलो का इतिहास, बुद्ध से, ईश्वर और प्याज, बरलिन की टूटी दीवार को देखकर, जे.एन.यू. में हिन्दी और शहरबदल जैसी कविताएं अपनी अंतरवस्तु में गहन और बनावट में अपूर्व है। लुखरी का आत्मव्यंग्य न दूसरों को बख्शता है, न अपने को! हन्तासी और अयथार्थ भी आज की जटिल सच्चाई के ही सगोतिया हैं।

तालस्ताय और साइकिल' केदारनाथ सिंह की लम्बी काव्य–यात्रा का एक ऐसा पड़ाव है, जहां समकालीन अनुभव के कई ऐसे धरातल उभरते दिखाई पडते है जो उसके नए अनुषंगों को खोलते है और कई बार उसकी सुपरिचित परिधि को अतिक्रांत भी करते है।

अकाल में सारस' केदारनाथ सिंह की सबसे महत्वपूर्ण कृति है। वर्ष १९८८ में प्रकाशित इस कविता संग्रह में उनकी १९८३ से १९८७ के मध्य की कविताएं संकलित संकलित है। 'अकाल में सारस' इस संग्रह के लिए वर्ष १९८९ में साहित्य अकादमी पुरस्कार से पुरस्कृत किया गया है।

अकाल में सारस कविता मनुष्यों के बुरे व्यवहार को संकेत करने वाली होते हुए भी जीवन की आशा लाती है। भौतिक अर्थ में अकाल होते हुए भी अर्थ के अतिक्रमण की कविता है। कही न कही आशा किरणें अंकुरित होती है। उनकी कविताओं में अलग आकर्षण होता है। आसपास की साधारण सी लगने वाली चीजे उनकी कविता के विषय होते है और वो अपनी कविता में बहुत खूबसूरती से इन चीजों का उपयोग करते है। केदारनाथ वर्णन नही चित्रण करते है। मानव संस्कृति के विकास में कवि का योग दो प्रकार से होता है नवीन परिस्थितियों के तल में अन्त: सलिला की तरह बहती हुई अननुभूत लय अविष्कार के रूप में तथा अछूते बिम्बों की कलात्मक से योजना के रूप में। केदारनाथ सिंह नई कविता विशिष्टता के बारे में विचार व्यक्त करते है कि परीक्षा न तो चरित्र–चित्रण की पूर्ण प्रचलित पद्धति पर हो सकती है, न ही प्राचीन रसवाद के नियमों के आधार पर। केदारनाथ सिंह की कविताओं में नई ताजगी और भाषा की एक विशिष्ट चमक है जो उनको समकालीन अन्य गीतकारों से अलग करती है।

प्रस्तावना :– मानवीय संवदेना मानव–जीवन का अनिवार्य तत्व है। जिस व्यक्ति के जीवन में व्यापक मानवीय संवेदना की स्वच्छ निर्मल धारा प्रवाहित नहीं है, उसका जीवन कभी भी मधुर स्पृहणीय और श्लाघनीय नहीं हो सकता। मानव–जीवन में अभिव्यक्त संवेदना आर्थिक, सांस्कृतिक, सामाजिक और कलात्मक धरातल पर मनुष्य का इतिहास भी उसके आस–पास ही रहता है इस लिए संवेदना में एक प्रकार का सातत्य रहता है। यदि उसकी संवेदना शाश्वत है तो वह काल विशेष को ही प्रभावित न कर, आने वाले युग को भी प्रभावित करती है। संवेदन जीवन का आधार तत्व है। जीवन का भाव तत्व है। चेतन तत्व है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने लिखा है " मनुष्य अपने भावों विचारों और व्यापारों के लिए दूसरों के भावों, विचारों और व्यापारों के साथ कहीं मिलाता है और कहीं लड़ाता हुआ अन्त तक चला चलता है। और इसी को जीना कहते है। जिस अन्नत रूपात्मक क्षेत्र में यह व्यवसाय चलता रहता है उसका नाम है– जगत"।[१]

मनुष्य दूसरों के साथ सम्बन्ध स्थापित करने में कभी मधुर अनुभव करता है, प्रसन्नता प्राप्त करता है। तो कभी दु:खी होता है पीड़ा का अनुभव करता है कभी मधुर कटु दोनों तरह के अनुभव

करता है। कभी-कभी सामान्य अनुभव भी करता है जो न कटु होते है न मधुर। मानव-जीवन में ऐसे अनेक क्षण आते हैं जब दूसरों के व्यापार में वह अनेक प्रकार के अनुभवों से निकलता है। क्योंकि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है सामाजिकता मनुष्य का सबसे महत्वपूर्ण गुण और अनिवार्य आवश्यकता है। यूनानी दार्शनिक, अरस्तु ने समाज की आवश्यकता के संदर्भ में कहा था। वैसे तो प्रत्येक वस्तु समाज के प्रति जागरूक रहती है। मनुष्य की सामाजिकता तो महत्वपूर्ण है ही पर उसकी मानसिकता, उसकी संवेदनशीलता कहीं अधिक महत्वपूर्ण है। यही मानसिकता कवि और शास्त्रकार को समाज से और युगीन संदर्भो से जोड़ती है।

मनुष्य की जिजीविषा है, वह जीना चाहता है, वह अपने को प्रकट भी करन चाहता है। अभिव्यक्ति उसकी मूल आवश्यकता है। जिस पर जीने के लिए भोजन, पानी, शयन जागरण, की आवश्यकता है। उसी प्रकार अपनी अभिव्यक्ति की भी है। वह अपने आपको प्रकट कने का अवसर ढूढता है। अवसर मिलते ही वह जो कुछ भी है, उससे अधिक अपने आपको प्रकट करता है। यह प्रकटीकरण अपने हृदय को आनन्द के लिए और कभी दूसरों को आकृष्ट करने के लिये उनके मनोरंजन और उपदेश के लिए होता है। जब वह धीरे-धीरे गुनगुनाता है तब वह अपने सुख-दुख को वाणी देता है और जब वह पूरे सुर के साथ लोगों के सामने गाता है तब वह दूसरों को अपनी ओर आकृष्ट करता है। जिस प्रकार सघन बादलों को देखकर वर्षा का अनुमान लगाया जा सकता है। उसी प्रकार चेहरे पर बिछी लकीरों को देखकर उस व्यक्ति में व्याप्त भय क्रोध प्रेम विवक्षण और निरीहता को अच्छी तरह देखा और परखा जा सकता है। इसका निरीक्षण और परीक्षण हर किसी के सामर्थ की बात नहीं है। कोई पारखी व्यक्ति ही इसे पढ सकता है। जिस तरह राह चलते व्यक्ति से प्रेम नही किया जा सकता घृणा नहीं की जा सकती उसी प्रकार राह चलते व्यक्ति के सामने अपने आप को अभिव्यक्त नहीं किया जा सकता। अभिव्यक्ति को सही रूप देने के लिए दो बातों की आवश्यकता रहती है। पहली आवश्यकता है वक्ता के जीवन की गहराई में पैठ और दूसरी है श्रोता में समझने की शुद्ध सार्थकता यहाँ भी मूल में संवेदना ही रहती है। मानव ने कभी रंगों को गहराई दी कभी तूलिका द्वारा आडी तिरछी सपाट रेखाओं को वाणी दी। कभी छेनी द्वारा निर्जीव वस्तुओं में प्राण फूंके और कभी शब्दों द्वारा दूसरों को आर्द्र किया। इस प्रकार रंगों की गहराई रेखाओं की वाणी प्रस्तर खण्डों की जीवन्तता तथा शब्दों के गीलेपन द्वारा कला का जन्म हुआ। अटूट आस्था और अनवरता साधना द्वारा कला का संस्कार हुआ है यही संस्कारित कला मानव के अन्तरतम को बाँधनें में सफल होती है। वह कालगत और देशगत सीमा का अतिक्रमण कर सहृदय के दूरस्थ संसार में पहुँच जाती है। "कारण कि प्रत्येक देश और युग की कला का महत्व सर्वत्र स्वीकार किया जाता है। काव्य में शब्द और अर्थ कला का माध्यमबनते है।"[२] रचनाकार शब्दों के माध्यम से सहृदय पाठक या अध्येता के साथ साक्षात्कार करता है। जिस प्रकार पदचाप में व्यक्ति का आकार छिपा रहता है उसी प्रकार शब्दों में भी कवि का आकार रूप छिपा रहता है। रचनाकार आपने भीतर को प्रकट करता है। उन भीतरी भावनाओं को जो पहले किसी कारण वस नहीं प्रकट हो पाई थीं। जिस प्रकार उचित समय में वायु जल ऊष्मा पाकर बीज से अंकुर फूट निकलता है उसी प्रकार समुचित कारण से सुख दु:ख के गहरे अनुभवों से कवि का हृदय शब्द बनकर फूट निकलता है। व्याध के वाणों से विद्ध क्रौंच पक्षी मर्मान्तक पीड़ा और उसके सहचर के करूण क्रन्दन से महर्षि वाल्मीकि की संवेदना मुखरित हो उठी-

" मा निषाद प्रतिष्ठां त्वमगम: शास्वती: समा:।
यत्क्रौंच मिथुनादेकमवधी: काममोहितम ।।"[३]
हे निषाद!

तुमने प्रेम से डूबे क्रौंच पक्षी को मार डाला अत: तुम अनन्त वर्षों तक प्रतिष्ठा न प्राप्त करों। महर्षि की संवेदनामयी वाणी को सुनकर स्वयं ब्रह्मा उपस्थित हुए और उन्होंने रामचरित लिखने के लिए उनसे कहा। इसी प्रेरणा के फल स्वरूप महर्षि वाल्मीकि ने उत्तम काव्य वाल्मीकि रामायण की रचना की। इस रचना से हम भारतीय ही नहीं अपितु सम्पूर्ण विश्व उपकृत हुआ है।

कवि सार्वजनिक सत्य का उद्‌घाटन करता है वह अपनी विशिष्ट सम्वेदनाओं को प्रकट कर सकती है। जहाँ साधारण अभिव्यक्ति में मनुष्य का उद्‌देश्य केवल विचारों का आदान प्रदान रहता है। वहाँ साहित्यिक अभिव्यक्ति में विषय और शैली की समन्वित शक्तिमत्ता विद्यमान होती है यही कारण है कि काव्य की अभिव्यक्ति इतिहास, भूगोल, दर्शन, अर्थशास्त्र से भिन्न है।

हर रचनाकार अपनी अनुभूति को कल्पना द्वारा सुन्दर बनाता है और बाद में शब्दों द्वारा पाठक को छूता-सहलाता है। कल्पना के अभाव में कोई भी अनुभूति काव्य नहीं हो सकती। प्रत्येक मनुष्य में समान भावनायें रहती हैं। परन्तु कवि उन्हें काल्पनिक सौन्दर्य देकर काल की सीमा तक पहुँचाता है। प्रेम, घृणा, दया, क्रोध, आदि प्रवृत्तियाँ सभी मनुष्यों में पाई जाती है। अन्तर केवल परिणाम में है। प्राकृतिक सौन्दर्य देखकर केवल कवि हृदय ही काव्य रचना कर सकता है। वह केवल काव्य रचना ही नही करता बल्कि पाठक के मन में वैसी ही अनुभूति उत्पन्न कर देता है जैसी उसके मन में होती है।

कविता कवि की प्रतिच्छंवि है, यह वह दर्पण है जिसमें कवि का आन्तरिक फलक प्रतिबिम्बित होता है। उसमें कवि का चेतन अचेतन तत्व, युग परिवेश, संस्करण निर्माण सब कुछ देखा जा सकता है। कविता में से न कवि को निकाला जा सकता है न उसके गुण को। दोनों में से एक को भी निकाल देने से कविता निश्चित पंगु हो जाती है।

जिस मनुष्य की हृत्तन्त्री दूसरे के आनन्द के अवलोकन से स्वत: बजने लगती है जिसका हृदय दीन तथा अन्तर्जनों की करूण क्रन्दन से पिघल उठता है जो जगत् के प्राणि मात्र के साथ तादात्म्य अनुभव कर उनके हर्ष में हृष्ट, विषाद, में विषण्ण, हास्य में प्रसन्न, क्रोध में दीप्त, अनुराग में अनुरक्त होने की शक्ति से युक्त होता है वह मानव नहीं महामानव है। ऐसे व्यक्ति ही सही अर्थो में मानवीय संवेदना से युक्त होता है। ऐसे व्यक्ति के हृदय को क्षुद्र स्वार्थ की भावना कभी प्रेरित नहीं करती प्रत्युत परोपकार के नाम पर उसका चित्त नाच उठता है। उनके जीवन का "स्व" पर रूप में स्वत: परिणत हो जाता है और वह मानव के चरम विकास पर पहुँच जाता है, हृदय की संकीर्णता ही बन्धन है और हृदय की उदारता ही मुक्ति है। जो मनुष्य अपना-पराया, जाति-पाँति, छुआ-छूत, धनी-निर्धन, लाभ-हानि के विवेचन में दिन काटता है वह खुले स्थान में रहने पर भी हृदय के कारागार में निवास करता है, परन्तु जिसका हृदय "वसुधैव कुटुम्बकम्" मंत्र की उपासना से उदात्त तथा विशाल है वह मनुष्य मुक्ति का आनन्द प्राप्त करता है। "जिस प्रकार ज्ञान-योग प्राणिमात्र में एक ही परमात्मा का प्रतिपादन कर अद्वैत का उपदेश देता है उसी प्रकार प्राणिमात्र में रागात्मक वृत्ति का प्रतिपादन भी भाव योग की चरम सीमा है।"[५] इस उदात्त भाव योग की सिद्धि मानवीय संवेदना के द्वारा होती है।

"वस्तु की जिस विशेषता के अभाव में वस्तु की सत्ता नहीं विद्यमान रह सकती उसे उस वस्तु का गुण कहते है" [६]प्रत्येक गुण का अपना निजी गुण होता है जो उस वस्तु को दूसरी वस्तुओं से अलग करने में सहायक होता है। वस्तुओं के गुण को विशिष्ट गुण की संज्ञा दी जाती है। यह उस गुण का स्वरूपाधायक तत्व होता है। उदाहरणार्थ- सूर्य का गुण है शीतलता, ताप के अभाव में सूर्य तथा शीतलता के अभाव में चाँद का कोई अस्तित्व ही नहीं। मनुष्य में उसकी चिन्तनशीलता का रहना उसका गुण है। जिसके अभाव में मनुष्य-मनुष्य नहीं रह जाता।

संवेदना के अपने कुछ विशिष्ट गुण हैं जिसके अभाव में संवेदना संभव नहीं। टिचनर ने संवेदना के चार गुणों (तत्वों) का उल्लेख किया जाता है-

१. गुण प्रकार, २. तीव्रता, ३. सत्ताकाल, ४. स्पष्टता

इन चार गुणोंके अतिरिक्त स्काउट ने दो और गुणों की चर्चा की है।

१. व्याप्ति या विस्तार

२. स्थानीय चिन्ह

<u>प्रकार या गुण</u> :-

गुणों के आधार पर संवेदनायें पाँच प्रकार की होती है। दृष्टि, स्वाद, श्रवण, घ्राण तथा त्वक्। यह पाँचों संवेदनायें एक दूसरे से भिन्न हैं। संवेदनाओं में अन्तर या तो सामान्य गुण के कारण है या तो विशिष्ट गुण के कारक। सामान्य गुणों के अन्तर का मूल आधार उत्तेजित ज्ञानेन्द्रियों का अन्तर है। सामान्य गुण के आभास के लिए कम से कम दो ज्ञानेन्द्रियों के उत्तेजित होने की आवश्यकता पड़ती है। जैसे कानों के उत्तेजित होने से श्रवण संवेदना और आँखों के उत्तेजित होने से दृष्टि संवेदना होती है। परन्तु विशिष्ट गुणों के आभास के लिए एक ही ज्ञानेन्द्रियों की आवश्यकता पड़ती है। यथा दृष्टि संवेदना में हमें लाल या पीले रंग की संवेदना होती है। इसके अतिरिक्त लाल रंग में गहरा लाल, हल्का लाल, फीका लाल इत्यादि संवेदना होती है इस प्रकार जो विशिष्ट संवेदनायें हमें एक ही लाल रंग की भिन्न-भिन्न मात्राओं/छायाओं के प्रति मिलती हैं वे विशिष्ट गुणों के कारण होती है।

<u>तीव्रता</u> :-

इसका तात्पर्य सम्वेदना की मात्रा से है। यदि हमें दो रंग की छायायें ले तो देखेंगे कि एक छाया दूसरी से अधिक चमकती है। यह एक ही अपेक्षा दूसरे की तीव्रता को दर्शाती है। इसी प्रकार दस पावर के बल्ब से उत्पन्न सम्वेदना २५ पावर के बल्ब से उत्पन्न संवेदना भिन्न होगी।

<u>व्याप्ति</u> :-

इसका अभिप्राय स्थान के विस्तार या व्यापकता से है। जो उद्दीपक ज्ञानेन्द्रिय के अधिक भाग के उद्दीप्त करता है। इसकी व्यापकता उतनी ही अधिक होती है। जैसे एक गुलाब के पौधे को देखने से उत्पन्न संवेदना की व्यापकता अधिक होती है। इसी प्रकार जीभ की नोक पर भोजन रखने से जो स्वाद मिलता है वह उस स्वाद से भिन्न होता है। जो खाने की जीभ के मध्य भाग पर रखने से मिलता है।

<u>स्थानीय चिन्ह</u>:-

यह देखा गया है कि भिन्न-भिन्न ज्ञानेन्द्रियों में भिन्न-भिन्न प्रकार की सम्वेदनाओं का स्थान निश्चित होता है। उदाहरणार्थ- त्वचा को यदि दो स्थानों पर समान उद्दीपक से और समान दबाव से स्पर्श किया जाये तो दोनों स्थानो पर स्पर्श से उत्पन्न सम्वेदनाओं मे अन्तर होगा। "संवेदना भाव तथा संवेग से भिन्न है।"[७] भिन्नता लाने वाले विशिष्ट गुण स्थानीय चिन्ह ही है। सम्वेदना में स्थान निरूपण सम्भव है परन्तु भाव तथा संवेग में स्थान निरूपण सम्भव नहीं। सुख तथा दु:ख के भावों का अनुभव शरीर का कोई विशेष भाग नहीं करता वरन् इसकी अनुभूति सारे शरीर में समान रूप से होती है। इसी प्रकार क्रोध,भय, प्रेम, के संवेग को किसी एक अंग विशेष में निरूपित नहीं किया जा सकता इसका अनुभव करते समय सारा शरीर उत्तेजित हो जाता है। अनुभव की हुई संवेदनाओं की प्रतिमाओं का प्राप्त करना संभव है परन्तु भाव सदैव नूतन होता है। उसकी प्रतिमा की मस्तिष्क में अनुस्मृति करना संभव नहीं जैसे- जब हम एक सुन्दर पुष्प को देखते है उस समय हमें सुख की अनुभूति होती है तो कुछ समय पश्यात् जब हम पुष्प को पुन: स्मरण करना चाहें तो हमें पुष्प की दृष्टि अथवा गंध का स्पर्श संबंधी प्रतिमा तो प्राप्त हो जाएगी परंतु सुख के लिए जिस भाव की अनुभूति हमने पुष्प को देखने के समय की है उसकी अनुस्मृति नहीं हो पाएगी।

वर्डेण्ड रसेल के अनुसार "संवेदनाएं मानस को वाह्य जगत से जोड़ती है। "हमारे मनोविकारों के मूल में संवेदनाएं होती है। कल्पना विचार स्मृति- विधान भाव आदि सब संवेदनाओं के परिवर्तित रूप है। "मनुष्य केवल अपने बच्चों से ही प्रेम नही करता वह दूसरों के बच्चों के भी अपने प्रेम का भाजन बनाता है। वह मूर्त से बढकर अमूर्त से भी प्रेम करता है। वह मनुष्य को पीडित करने वाले पर ही अपनी प्रतिक्रिया नही व्यक्त करता अपितु प्राणी मात्र को सताने वाले पर भी अपना क्रोध व्यक्त करता है। वह मनुष्य, पशु-पक्षी, फूल-पत्ते, प्रस्तर खण्ड में भी सौन्दर्य की अनुभूति करता है वह किसी भी जीव के दुख से दुखी और सुख से सुखी हो जाता है, वह नही चाहता कोई भी प्राणी इस धरती पर दुखी रहे। वह सबको सुखी और शांत देखना चाहता है। चिडिया के

घोसले से नीचे गिरे और तड़फड़ाते उसके बच्चे को देखकर वह मर्माहत हो जाता है अपने बछडे से बिछुड़ी गाय की स्थिति पर रो पड़ता है, पालतू जानवर का साथ छूट जाने पर उसका हृदय विर्दीण हो जाता है यह है मानवीय संवेदना जिसके आभाव में मानव मानव नही होता।"[८]

<u>तालस्ताय और साइकिलकाव्य संग्रह में संवेदना</u> :-

केदारनाथ सिंह की हर कविता एक नया प्रस्थान है जो काव्यात्मक-अकाव्यात्मक, सहज-जटिल को एक साथ साधने की विलक्षण कला का साक्ष्य है। जो कवि 'तालस्ताय और साइकिल' जैसी कविता लिख सकता है, जो चीटियों की रूलाई सुन सकता है उस कवि को, गहरी समझ के साथ ही पढा जा सकता है। यह कविता और मनुष्य को बचाने की ऐसी कोशिश है जो देह-देहांतर के रिश्तों को पहचनाने में समक्ष है।

केदारनाथ सिंह की नई कविताओं का संग्रह है जो सबसे पहले कविता का देशज-नागर-वैश्विक इतिहास और भूगोल-विमर्श के बीच एक पुल बनाता है और सांस्कृतिक बहुलता को अर्थ देता है, पहले की, पर लम्बे समय से बनी पहचान को यह छन्द और छन्द के बाहर नया विस्तार देने वाला संग्रह है। एक कविता शीर्षक के अनुसार ही कहे, यह एक जरूरी चिट्ठी का मसोदा है। 'पानी की प्रर्थना' शीर्षक कविता में कवि की पंक्ति।"[९]

इस कविता के माध्यम से कवि सामाजिक, सांस्कृतिक, यर्थाथ की ओर संकेत किया है कि प्राकृति का संतुलन बिगड़ने से समाज और संस्कृति में क्या प्रभाव पड़ता है मनुष्य प्रकृति का संतुलन पर्यावरण दोनों का दोषी होता है, आखिरी में ईश्वर से प्रार्थना करता है कि हम इस पृथ्वी के सबसे पुराने जीव नागरिक है इस प्राकृतिक प्रकोप से इस पृथ्वी के जीव जन्तुओं की रक्षा करो। इस संसार के सभी जीव-जंतुओं के प्रति कवि की संवेदना है, 'चीटियों की रूलाई' शीर्षक से स्पष्ट होता है-

सुनो इस शहर को यहां से उठाओं
और रख दो मेरे कंधे पर
मैं इसे कहीं ले जाना चाहता हूं
मैं ले जाना चाहता हूं इस शहर को
इस शहर से दूर
जैसे गौरैया ले जाती है अपना मटर का दाना।[१०]

उक्त पंक्तियों की भांति 'घोसले का इतिहास' शीर्षक में कवि ने पक्षियों के घोसले के साथ-साथ गरीबो की झोपड़ी की भी बात कहीं है, गरीबों की झोपड़ी यहां चिड़ियों का घोसला है जिसे कानून व्यवस्था के तहत अतिक्रमण कर तोड़ दिया जाता है रह जाते है तो सिर्फ बड़े लोगों के पक्के घर जिसको तोता पिंजरा जो बाजार में मिलता है, कहा गया है।[११]

'पूस की रात' : पुनश्च शीर्षक में कवि ने एक बार फिर मुंशी प्रेमचन्द की कहानी को याद करते हुए मानव और जानवर की संवेदना को सामने रखा है। आज वही स्थिति गरीबों की है जो झुग्गी झोपड़ियों में आग के सहारे ठण्ड गुजारते हैं उन्हें आज भी कम्बल या रजाई नसीब नहीं होती।

पिछली रात की भयानक ठंड में
मुझे अचानक याद आया
छोटा-सा अलाव प्रेमचन्द की कहानी
'पूस की रात' का
मेरी जानकारी में
वह पृथ्वी पर पहली आग थी
मिलकर जलाई थी।[१२]

केदारनाथ सिंह की समूची काव्य संरचना चाहे जितनी कलात्मक और नये तौर तरीको वाली हो उसके भीतर आदमी की संवेदना से जुड़ने की एक अनायास कोशिश दिखती है। बार-बार छूटा हुआ गाँव - कस्बा उन्हे याद आता है। वहाँ के लोग याद आते हैं। नीम के पेड़ के नीचे वाक्य

पादीयम् का भाष्य लिखते पंडित रघुनाथ शास्त्री याद आते हैं दिमाग में टँकी कुशीनगर की छबियाँ याद आती हैं, नूर मियाँ, टमाटर बेचने वाली बुढ़िया, चीना बाबा, पडरौना के किसानों का धीरज याद आता है। कैलाशपति निषाद याद आते हैं, भिखारी ठाकुर याद आते हैं..... लोगों के सुख – दु:ख में ये कवितायें शरीक दिखती है। आखिर कार कवि की कविता ही तो आम्मकात्थ्य और मेनीफेस्टो हैं। ' मोड़ पर बिदाई में भूखे दुखे नागरिकों से अपनी कविता का संबंध जोड़ते हुये वे कहते हैं।[१३]

मनवीय संवदेना और स्वच्छता का अन्योन्याश्रित संबंध है। मानव मन यदि कालुष्य रहित होगा तो वह सकारात्मक सोच को उत्पन्न कर सकेगा। केदारनाथ सिंह जी ने स्वच्छता के लिए स्वतंत्र रूप से स्वच्छता अभियान नामक कविता लिख कर यह सिद्ध कर दिया है कि प्रत्येक व्यक्ति स्वच्छता के लिए पूर्ण जिम्मेदार है इसीलिए उन्होंने कहा कि हम सभी को स्वच्छ रहने के लिए उच्च सोच को उत्पन्न करते हुए आत्मा को द्वेष रहित बनाना है तभी आत्मशक्ति की सार्थकता सिद्ध होगी और प्राणी संवेदनशील होगा।

इतनी गर्द भर गयी है दुनिया में
कि हमें खरीद लाना चाहिए एक झाड़ू
आत्मा के गालियारों के लिए
और चलाना चाहिए दीर्घ एक स्वच्छता-अभियान अपने सामने की नाली से
उत्तरी ध्रुवान्त तक।[१४]

<u>अकाल में सारस काव्य संग्रह का सम्वेदना</u>:-

'सूर्यास्त के बाद एक अंधेरी बस्ती से गुजरते हुए' पूरी कविता सूर्यास्त से शुरू होकर धीरे-धीरे अंधकार के कई स्तरों का आभास देती चलती है। यह एक गांव की रात है। यह गांव की एक के अनेक अंधेंरों की कविता है। और अन्तत: सिर्फ एक गांव नहीं, पूरे मनुष्य के अंधकारमय जीवन और भासमान जीवट की कविता है।

कविता शुरू होती है : भर लो/दूध की धार की/धीमी-धीमी चोटें।

यह पहला विवरण है। गाय दुही जा रही है। खाली बाल्टी की पेंदी में पहली धार पड़ी और चोट की आवाज आ रही हैं। यह सूर्यास्त के तुरन्त बाद का समय है। अंधकार का पहला स्तर। यहां समृद्धि का आभास होता है। क्रिया है- भर ला। दूध की धार जो जीवन और उर्वरता का प्रतीक है। अंधकार में भी आशा है, समृद्धि है।

दूसरा विवरण आता है: दीए की लौ की पहली कंपकंपी/आत्मा में भर लो। यह अंधकार का दूसरा स्तर है। सूर्यास्त के कुछ देर बाद जब बची-खुशी रोशनी भी समाप्त हो चुकी है और दिया जलाया जा रहा है। यह दीए की लौ की पहली कंपकंपी है। इसका निष्कर्ष यह कि बत्ती पर्याप्त तेल से पैबस्त है, जिसके बिना पहली कंपकंपी सम्भव नहीं। समृद्धि का भाव विद्यमान। क्रिया है-भर लो। लेकिन कंपकंपी अनजाने ही एक आशंका भी उत्पन्न कर देती है। इस ध्वनि का पूरा स्वाद भिन्न है। अंधकार के दूसरे स्तर के साथ, अंधकार के चढ़ने के साथ पहली आशंका प्रगट होती है।

इन कविताओं की सबसे बड़ी खूबी है- आंचलिकता से मुक्ति। इस तरह की कुछ अन्य कविताएं हैं- बोझे, पशु-मेला, कुछ सूत्र जो एक किसान बाप ने बेटे को दिए, अकाल में दूब, पर्वस्नान, गंगा को देखकर तथा रास्ता।

इन कविताओं में बहुत सूक्ष्म निरीक्षण मिलता है- गहरी आत्मीयता और जीवन के नए अर्थ। 'कुछ सूत्र जो एक किसान बाप ने बेटे को दिए के प्राय: सारे ब्यौरे बिल्कुल नए है-वे ठेठ ग्रामीण जीवन के ब्यौरे होते हुए भी जीवन के वृहत्तर अर्थ व्यंजित करते हैं:,"[१५]

किसान-जीवन के जीवटता को बहुत ही शक्ति से व्यक्त करने वाली कविता है 'अकाल में दूब'। लेकिन यह जीवटता सिर्फ एक किसान का जीवटता नहीं है, यह मनुष्यमात्र की जीवटता है। 'भयानक सूखा है'- सीधे-सीधे कविता शुरू होती है। सूखे की विभीषिका के एक पर एक कई नक्शे

आते-जाते हैं। लगता है, जैसे जीवन लुप्त हो गया है। लेकिन तभी 'शीशे के बिखरे हुए टुकड़ो के बीच' नजर आती है एक हरी पत्ती।"[१६]

जहां रास्ता नहीं है वहां भी रास्ता निकल आता है। जिधर से गाय गई है, वही पथ है। यहां पशुओं का साथ जैसे मानव-संग की तरह है, अपना और विश्वसनीय। यह एक अखण्ड जीवन है, अपनी समस्त दुर्बलताओं और पीड़ा के बावजूद। केदारनाथ सिंह की इन कविताओं में जानवर और पक्षी अपनी पूरी गरिमा और स्नेह-शक्ति के साथ विराजमान हैं। चाहे वह 'पशुमेला' हो या 'पांच पिल्ले' या 'छोटे शहर की एक दोपहर' का कौआ, 'घुलते हुए गलते हुए' की पानी में खड़ी एक सन्तुष्ट भैंस। गांव की जीवन एक नए तरीके से इन कविताओं में व्यक्त हुआ है। केदारनाथ सिंह ने बड़े ध्यान से, बड़े प्यार से इस जीवन को आत्मा में भरा है- दूध को धार की और बिच्छुओं के उठे हुए डंक को। एक-दो स्थलों का जिक्र और करना चाहता हूं जैसे कि 'बोझे' कविता। पूरे प्रसंग का वितरण इतना सूक्ष्म और विस्तृत है कि बोझे बांधने का दैनंदिन काम एक घटना में बदल जाता हैं-जीवनी-शक्ति और विपुलता की राशि का संचयन। 'न होने की गन्ध' कविता में श्मशान से लौटने का प्रसंग आता है और सांदे ढंग से यह विवरण :

"हमारे आने पर भूंका नहीं
एक भी कुत्ता
क्योंकि कुत्तों को सब मालूम था"[१७]

इस संग्रह में जो दूसरा सबसे महत्वपूर्ण विषय है, वह है जीवन-मृत्यु का द्वन्द्व। ग्रामीण जीवन की कविताओं में भी यही विषय प्रमुख है। केदारनाथ सिंह के पूरे काव्य-जीवन में यह एक बड़े परिवर्तन को लक्षित करता है। जीवन और मृत्यु का द्वन्द्व प्राय: सभी कवियों में कभी-न-कभी, किसी-न-किसी स्तर पर जरूर ही व्यक्त हुआ है। केदारनाथ सिंह ने जीवन और मृत्यु को एक साथ रखकर उनके विभिन्न संयोगों को देखा है। एक तरफ 'अड़ियल सांस' है :

" मृत्यु से खेलते
और पंजा लड़ाते हुए
तुच्छ गरिमामय सांस"[१८]

यह कविता जीवन की 'एक लम्बी और अकेली सांस' का क्लोज-अप है। एक रोमांचक लेख-क्षण की तरह, स्लो मोशन टेकनीक में, केदाननाथ सिंह ने इसका वर्णन किया है, बहुत विस्तार से पूर्ण स्वर-संयम के साथ, उद्वेग-शून्य लय में। दूसरी तरफ कविता है 'पर्वस्नान'। जहां 'अड़ियल सांस' में सारे अतिरिक्त अंश छांट दिए गए है, वहां इस कविता में बिना कुछ छोड़े सम्पूर्ण स्थिति का चित्रण है जहां जीवन है, मृत्यु भी दोनों के यह-अस्तित्व से उत्पन्न द्विधा और तनाव भी। कविता जीवन और मृत्यु को एक साथ रखती है।"[१९]

यहां जीवन की पूर्णता में मृत्यु का आभास भी है। अमरता की खोज में किया जा रहा यह पर्वस्नान मृत्यु के कितना पास है :

"ऊपर कौए मंडरा रहे थे
और नीचे-
कांपते हुए जल में
अमरता की छपाछप होड़ थी"[२०]

बहुत सारे लोगों द्वार जल को पीटते हुए नहाने का सटीक चित्र है' कांपते हुए जल में अमरता की छपाछप होड़ मची थी' और ऊपर मंडराते हुए कौए तथा नीचे अमरता की होड़ का अंतविरोध प्रारम्भिक द्वन्द्व को ही गहरा करता है। हालंकि अन्तिम बन्द में, 'लाश टुकुर-टुकुर' देख रही थी जीवन का अद्‌भुत उत्सव' अमरता की होड़ को व्यर्थ और वीभत्स बना देता है। अड़ियल

सांस की जिद एक चीज है और अमरता की छपाछप होड़ बिल्कुल दूसरी। एक जीवन का जोर है तो दूसरा मृत्यु के सामने का अप्रत्यक्ष समर्पण। एक सामान्य मनुष्य की इच्छा सिर्फ यही है कि:
"दोना ही तो है,

कोई एक दिन उठाकर,
फेंक देगा बाहर,
पर उसी को लेकर अपने दोनों हाथों में,
मैं सूर्य से भी ज्यादा सम्पन्न हूं
इस पृथ्वी पर"[२१]

और यह दोना एक कवि का दोना है। 'हालंकि सच कहूं तो पचास वर्ष हुए मैं आज भी पृथ्वी पर चलता सीख रहा हूं।' यह एक कवि का विनम्र आत्म-स्वीकार है, जो अपनी प्रौढ़ता के बावजूद यह महसूस करता है कि अभी वह चलना सीख है। इस संकलन में कवि और कविता को लेकर अनेक कविताएं है। इस संग्रह की कुछ सर्वाधिक महत्वपूर्ण कविताएं इसी कोटि की है। पहली कविता 'मातृभाषा' से शुरू करके अन्तिम कविता ' प्रिय पाठक' तक-कविता और कवि इस संकलन का एक मुख्य विषय है। एक कवि का घर, एक कवि की अंतिम शरण-स्थली उसकी मातृभाषा ही है जैसे चींटियों के लिए बिल और वायुयान के लिए हवाई अड्डा। और कविता का उस मूल स्वप्न की खोज, जैसा कि वह स्वप्न वस्तु में बदल जाने के पहले था ।

" ठंड से नहीं मरते शब्द
वे मर जाते हैं साहस की कमी से"[२२]

"ठंड से नहीं नही नहीं मरते शब्द" कविता शब्दों के साथ कवि के गहरे, अंतरंग तालुक का बयान करती है। यहां शब्दों के अनेक रंग है :

" कोई चटक रंगों वाला रोएंदार शब्द
बढ़ा आ रहा है मेरी तरफ
एक खूबसूरत शब्द को दे मारा पत्थर
जब धान के पुआल में
वह सांप की तरह दुबका था।"[२३]

कविता रचने की, शब्दों के सहकर्म की यह बहुत ही संवेदनयुक्त कविता है। कवि का बचाव करने अन्ततः आया है 'एक खून से लथपथ छोटा-सा शब्द' जब उसे 'पांच-सात स्वस्थ सुन्दर शब्दों ने अचानक घेर लिया था ', और बोला : 'चलो, पहुंचा दूं घर।' यह एक भिन्न प्रकार की सौन्दर्य - दृष्टि है। जो क्षुद्र और विकृत है वही एक कवि का प्राणरक्षक है-मातृभाषा के हांफते हुए, खून से लथपथ शब्द जो वैसी ही जीवन-स्थितियों के बिम्ब हैं। केदारनाथ सिंह की इन कविताओं की भाषा पहले की मुकाबले ज्यादा देशज है। सम-कालीन कविता की भाषा के बारे में प्रायः यह कहा जाता है कि यह अनुवाद की भाषा है। इन आलोक में यदि हम इन कविताओं को देखें तो लगता है कि इनका स्वभाव ज्यादा देशी है। केदारनाथ सिंह ने इन कविताओं में अनेक लयों का इस्तेमाल किया है। गद्यनुमा कविता मुख्यतः बोलचाल की नाटकीयता पर ही टिकी रहती है। लेकिन इधर आकर एक बार ऐसा लगने लगता है कि लय अधिकांशतः एकरस होती जा रही है। हिन्दी भाषा की जो छटा है, वह लुप्तप्राय है। केदारनाथ सिंह ने एक बार फिर कुछ पुरानी लयों को पुनर्जीवित किया है।

संदर्भ स्रोत :-

१. कविता क्या है? (चिन्तामणि) आचार्य रामचन्द्र शुक्ल पृष्ठ-८२
२. संस्कृत काव्य शास्त्रीय भावों का मनोवैज्ञानिक अध्ययन डॉ. हरिदत्त शर्मा शास्त्री।
३. वा.रा. १.२.१५
४. अलंकारनुशीलन राजवंश सहाय प्रका. चौ. वाराणसी साहित्य और समाज से उद्धृत है।

डॉ. श्रीमति राजेश्वरी मरकाम

५. द्र. प्राचीन भारतीय साहित्य विंटरनित्ज प्रथम भाग प्रथमखण्ड मोतीलाल बनारसीदास वाराणसी १९६१
६. द्र. प्राचीन भारतीय साहित्य विंटरनित्ज प्रथम भाग प्रथमखण्ड मोतीलाल बनारसीदास वाराणसी१९६१
७. रस गंगाधर पं. जगन्नाथ।
८. संवेदना के स्तर ले. राजलवोरा नमिता प्रकाशन टाडन हाल होशंगाबाद।
९. तालस्ताय और साइकिल पृष्ठ – ९
१०. तालस्ताय और साइकिल पृष्ठ –९०
११. तालस्ताय और साइकिल पृष्ठ – २२
१२. तालस्ताय और साइकिल पृष्ठ – २८
१३. तालस्ताय और साइकिल पृष्ठ –१३६, १३७
१४.तालस्ताय और साइकिलपृष्ठ– ११६
१५. अकाल में सारस पृष्ठ– १९
१६. अकाल में सारस पृष्ठ– २८
१७. अकाल में सारस पृष्ठ– ४५
१८. अकाल में सारस पृष्ठ– ४४
१९. अकाल में सारस पृष्ठ– ४०
२०. अकाल में सारस पृष्ठ– ४१
२१. अकाल में सारस पृष्ठ– ६५
२२.अकाल में सारस पृष्ठ– १८२
२३.अकाल में सारस पृष्ठ–१८२,१८३

डॉ. श्रीमति राजेश्वरी मरकाम